हिंदी उपन्यासों में राष्ट्रवादी स्वर

डॉ. आर.पी. वर्मा,
असि. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
इन्दिरा गॉधी राजकीय महिलामहाविधालय,
रायबरेली, उ.प्र.

आज हिन्दी उपन्यास साहित्य निरन्तर विकसित होता जा रहा है। आज समाज में साहित्य के इसी अंग की अत्याधिक मांग है। दिन प्रतिदिन अनेक नये उपन्यास और लेखक प्रकाश में आते जा रहे हैं। औपन्यासिक शैली तथा रूप विधान के क्षेत्र में नये नये प्रयोग हो रहे हैं। इस प्रगति को देखते हुए हम कह सकते हैं कि हिन्दी उपन्यासों का भविष्य उज्जवल और महान है। बीच में कुछ समय तक हिन्दी उपन्यासों की धारा क्षीण पड़ गई थी, कहानी का विकास बड़ी तीव्र गति से होने लगा था। परन्तु कुछ समय बाद हमारे कथाकार पुनः उपन्यास लेखन की ओर प्रवृत्त हुए और आज उपन्यास हिन्दी का सर्वाधिक व्यापक, सशक्त और लोकप्रिय अंग बन गया है। हिन्दी के नये पुराने लगभग सभी कथाकार नित नवीन उपन्यासों की रचना कर रहे हैं। इन उपन्यासों का मूल स्वर प्रगतिशील जन चेतना है। कथा और शैली के क्षेत्रों में नये नये स्वस्थ प्रयोग हो रहे हैं। वर्तमान सामाजिक जीवन की विभीषिका अपने विभिन्न रूपों में नये उपन्यासों के माध्यम से अभिव्यक्त हो रही है। इतिहास की नई व्याख्याएं की जा रही हैं। अब मात्र प्रयोग के नाम पर लिखे जाने वाले उपन्यास समाप्त हो चुके हैं। यदि हिन्दी उपन्यास अपनी इसी तीव्र और संतुलित गति के साथ आग्र बढ़ता रहा तो विश्व साहित्य में अपनी महत्वपूर्ण स्थान बनाने में समर्थ होगा। बाबू गुलाब राय ने राष्ट्रीयता की व्याख्या करते हुए लिखा है कि "एक सम्मिलित राजनैतिक धैर्य में बंधे हुए किसी विशिष्ट भौगोलिक इकाई के जनसमुदाय के परस्पर सहयोग और उन्नति की अभिलाषा से प्रेरित उस भू–भाग के लिए प्रेम गर्व की भावना को राष्ट्रीयता कहते हैं।"_हिंदी उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में इसी राष्ट्रीयता को महत्वपूर्ण विषय के रूप में लिया है। स्वतंत्रता के पूर्व के साहित्यिक इतिहास को देखने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि साहित्यकारों ने युग की प्रगति का साथ दिया है संघर्ष किया है और इस दिशा में वे भी किसी अन्य वर्ग के लोगों से पीदे नहीं रहे हैं। यद्यपि स्वतंत्रता के लिए आंदोलन करना राजनीतिज्ञों का काम था, परंतु अनेकानेक साहित्यिक अपनी लेखनी के बल से आंदोलन को तीव्रतर करते रहे हैं। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध पर दृष्टि डालने पर स्पष्ट देखा जा सकता है कि इस अर्ध शताब्दी के प्रायः सभी प्रमुख साहित्यिक राष्ट्रीय चेतना से संपन्न रहे हैं और सभी ने अपनी–अपनी दृष्टि से उसके विकास में सहायता पहुंचाई है। राजनीति का लक्ष्य जनसमाज के बाहरी जीवन के हितों को देखना उनकी रक्षा करना और उनका संवर्धन करना है जबकि साहित्य का लक्ष्य समाज को ऐसी प्रेरणा देना है कि वह स्वयं अपने हितों और अधिकारों को समझ सकें और अपने दायित्वों के प्रति सजग हो सकें।

राष्ट्र एवं राष्ट्रीय महत्व के विषय सदैव ही साहित्य में स्थान पाते रहे हैं। प्रेमचन्द्र और उनके समकालीन उपन्यासकारों ने परतंत्र भारतीय समाज के सभी वर्गों और तद्यगीन समाज में उभरती विभिन्न प्रवृत्तियों के उदय और अस्त बिंदुओं का मार्मिक एवं यथार्थपरक चित्रण किया

है। एक ओर ब्रिटिश दासता के उस युग में वर्तमान जमीदारी उत्पीड़न और शोषण, सरकारी कर्मचारियों के अत्याचार एवं रिश्वतखोरी, बेकारी की समस्या तथा सरकारी दमन और अस्त बिंदुओं का मार्मिक एवं यथार्थपरक चित्रण किया है। एक ओर ब्रिटिश दासता के उस युग में वर्तमान जमींदारी उत्पीड़न और शोषण, सरकारी कर्मचारियों के अत्याचार एवं रिश्वतखोरी, बेकारी की समस्या तथा सरकारी दमनचक्र की कुटिल नीतियों जैसे राष्ट्रीय महत्व के विषय उनकी लेखनी के माध्यम से मुखरित हो रहे थे, तो दूसरी ओर भारतीय जनता कि अपरिसीम उमंग से भरी सर्वस्व बलिदान कर देने की अदम्य भावना भी उनके चित्रण का विषय थी, जो अपने देश को विदेशी दास्तां के बंधन से मुक्त कराने के लिए जन जन में कसमसा रही थी। हिंदी उपन्यासों में वर्तमान समय में राष्ट्रवादी स्वर की जब बात होती है, तो उसमें पितृसत्ता का वर्चस्व, जातिवाद, सांप्रदायिक वर्चस्व, अंध प्रांतीयवादी वर्चस्व, महानगरीय केंद्रीकरण, अंग्रेजी वर्चस्व और कॉर्पोरेट वर्चस्व का बोलबाला रहता है। दरअसल जातिवाद और सांप्रदायिकता को कथा साहित्य का विषय काफी जमाने से लगातार बनाया जा रहा है। हिंदी उपन्यासों में राष्ट्रवादी स्वर लगभग आजादी से पहले से ही देखा जा सकता है। इन उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में राष्ट्रीयता की भावना को एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में प्रयुक्त किया है। यहां कुछ महत्वपूर्ण उपन्यासों को लिया जा रहा है।

हिंदी उपन्यास 'परीक्षा गुरू' (1982) अंग्रेजी राज के भोग विलास में डूबे एक ऐसे व्यापारी की कथा बनकर आता है। जो औपनिवेशिक आधुनिकता के अनुकरण में डूबा है और व्यापार से विरत है। उपन्यासकार चाहता है कि दिल्ली का यह रईस अंग्रेजों के सिर्फ सद्‌गुणों की नकल करें। बंकिमचंद्र ने बांग्ला उपन्यास आनंद मठ में हिंदुओं के कष्टों के लिए, मुसलमानों को जिम्मेदार ठहराया। यह औपनिवेशिक राष्ट्रीयता का असर था। राधाकृष्णदास ने 'निस्सहाय हिंदू' में भी इसी विषय को उठाया है। प्रेमचंद्र के पूर्ववर्ती उपन्यासकार तो ब्रिटिश शासन का गुणगान ही कर रहे थे और जिन्हें ब्रिटिश शासन की वास्तविकता का बोध हो चुका था। वह भी उसके आतंक और दमन से त्रस्त थे। इन उपन्यासकारों ने अधिक से अधिक अपने उपन्यासों में ब्रिटिश शासन के द्वारा होने वाले आर्थिक शोषण, देशोन्नति, शिक्षा के प्रसार, उद्योग धंधों और कृषि के विकास, सामाजिक सुधार, स्त्रियों की स्थिति में बदलाव लाने, जमींदारों द्वारा किसानों के शोषण और दमन पुलिस विभाग की रिश्वतखोरी और अत्याचार सरकारी अमलों में फैले भ्रष्टाचार आदि का चित्रण और यत्किचित आलोचना तो करते थे। पर शासन का विरोध करने का साहस उनमें नहीं था। प्रेमचंद्र ने अपने कथा साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना को अभिव्यक्त करने की कोशिश की और जिसके लिए उन्हें सरकार का कोपभाजन भी बनना पड़ा।

प्रेमचंद्र पर गांधीवाद का बेहद प्रभाव रहा है। गांधीवादी आंदोलन से प्रभावित प्रेमचंद्र के तीन उपन्यास विशेष महत्वपूर्ण है, जिन पर इस आंदोलन का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा–प्रेमाश्रय, रंगभूमि और कर्मभूमि। राष्ट्रीय आंदोलन की औपन्यासिक त्रयी रही है इन में चित्रित आंदोलन का स्वरूप पूंजीवाद और सामंतवाद के विरूद्ध है। गांधी जी भी पूंजीवाद के विरूद्ध आंदोलन चला रहे थे। प्रेमाश्रय का 'प्रेमशंकर' 'रंगभूमि का सूरदास' और कर्मभूमि का अमरकांत जन आंदोलन का सूत्रपात करते हैं। वे राष्ट्रीय आंदोलन की प्रतिछाया है। "गत युग के सामाजिक और राजनीतिक जीवन में आर्थिक विषमताओं के जितने भी रूप संभव थे, प्रेमचंद्र की दृष्टि उन पर पड़ी थी।" प्रेमाशंकर, सूरदास और अमरकांत में गांधी का प्रतिबिंब स्पष्ट देखा जा सकता है। असत्य पर सत्य की विजय, हृदय परिवर्तन, सत्याग्रह आंदोलन चरखा और करघा, लगान बंदी आंदोलन, गांधी इरविन

समझौता, नरम दलिय मनोवृति, नौकरशाही का दमन, स्वराज्य की व्याख्या, स्वदेशी की भावना, नारी जागरण, किसान और मजदूर आंदोलन, जमीदारों का शोषण, रियासतों का अत्याचार आदि अनेक यथार्थवादी राजनीतिक घटनाओं को उपन्यासकार ने चित्रित किया है। निश्चय ही प्रेमचंद्र का उपन्यास साहित्य अपने युग के भारत का और उसके स्वाधीनता संग्राम का स्पष्ट प्रतिबिंब है।

इधर जैनेंद्र कुमार भी गांधीवादी युग की देन है। गांधीवाद पर उनकी पूर्ण निष्ठा और आस्था रही है। गांधीवाद की स्थापना के लिए उन्होंने अपने साहित्य में आतंकवादी क्रांतिकारी आंदोलन को अपनी भर्त्सना का विषय बनाया है। इसलिए उनके उपन्यासों में गांधीवाद का समावेश तो है ही क्रांतिकारी राजनीतिक वातातरण घटाटोप भी कम नहीं है। 'सुनीता' का परिप्रसन्ना क्रांतिकारी है सुनीता के सौजन्य से हरि प्रसन्ना की क्रांतिकारिता का अवसान हिंसा में अहिंसा गांधीवाद की विजय है। लोमहर्षक वर्णन है। जिनके मूल में मानवता के पराभव का षडयंत्र रचने वाली उद्धत कुत्सित मनोवृत्तियां क्रियाशील थीं। उस समय धर्मांधता एवं सक्रियता की उद्धत शक्तियां प्रबल वेग से सक्रिय होकर देश के दुर्भाग्य की कहानी लिख रही थी। इसी तरह इलाचंद्र जोशी का उपन्यास 'मुक्तिपथ' था इसमें स्वातंत्रयोत्तर भारत की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दशा के परिप्रेक्ष्य में राजीव नामक क्रांतिकारी युवक की संघर्ष कथा वर्णित है। 'बलचनमा' नागार्जुन के उपन्यास में कथा नायक का बचपन स्वतंत्रता पूर्व की जमींदारी 'शोषणवादी' निरंकुश उत्पीड़न के सहने की कहानी है। राजेंद्र यादव के उपन्यास 'उखड़े हुए लोग' में कथानक केवल सात दिनों का है केवल सात दिनों के माध्यम से शासनतंत्र एवं भ्रष्ट नेताओं के जीवन की गाथा को कहने का प्रयास किया है। जिसका मुख्य उद्देश्य कांग्रेसी नेताओं और सामाजिक राजनीतिक दलों की दुर्बलता का उद्‌घाटन करना है।

अमृतलाल नागर ने 'बूंद और समुद्र' में मुख्य रूप से पुरानी समाज व्यवस्था के अंतर्विरोधी तथा उसके टूटने और बदलने का चित्रण किया है। बुद्धिजीवी और माध्यम वर्ग के पढ़े–लिखे लोगों की समस्याओं और रूढ़िगत संस्कारों, आस्था के संकट आदि का चित्र भी उपन्यासकार का लक्ष्य है। उपन्यास का कथा संसार अत्यंत व्यापक और वैविध्यपूर्ण है। चुनाव की राजनीति, राजनीतिक दलों की आपसी खींचातानी, पुलिस की धांधली, न्यायालयों की न्याय देने में असमर्थता, मंदिरों में फैले प्रपंच और भ्रष्टाचार संस्कृति के नाम पर जारी रीति रिवाजों के व्यापक चित्र तथा पाखंड उपन्यासों में देखने को मिलता है। 'अमृत और विष' में इस आस्था में दरार दिखाई देती हे। राजनीतिज्ञों और पूंजीपतियों की मिलीभगत से होने वाली लूट, चुनावी भ्रष्टाचार, राजनीति में धन शक्ति और गुंडा शक्ति का बढ़ता प्रभाव, बुद्धिजीवियों का चारित्रिक खोखलापन, नौकरशाही का संवेदनाशून्य कठोर खुशामदी चरित्र आदि के माध्यम से राष्ट्रवादी स्वर देखने को मिलता है।

भगवती चरण वर्मा का उपन्यास 'सबहिं नचावत राम गोसाई' एक सामाजिक व्यंग्य रचना है। उपन्यास में गृहमंत्री द्वारा उलटफेर और राजनीतिक नेताओं पर प्रभाव के संरक्षण में भ्रष्टाचार को अनावृत किया गया है। उनके उपन्यासों में देश में होने वाली राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक उथल–पुथल का अंकन किया गया है। 'सबहिं नचावत राम गोसाई' और 'सामर्थ्य और सीमा' का कथ्य भी स्वतंत्र भारत के इतिहास से ही जुड़ा है। जबकि 'टेढ़े मेढ़े रास्ते' का विषय स्वाधीनता संग्राम की पृष्ठभूमि से सम्बद्ध है। आजादी के बाद राजनीतिक जीवन में आई विकृतियों का भगवती चरण वर्मा ने प्रमुखता के साथ अंकन किया है। रेणु ने भी 'मैला आंचल'

में नगरीय परिवेश से दूर गांवों में राजनीतिक चेतना के सुगबुगाने का पर्याप्त विस्तार और समझ के साथ चित्रण किया है। अमृतराय ने भी हाथी दांत में आजादी पूर्व के दो दशकों में जमींदारों द्वारा किसानों पर किये जाने वाले अत्याचारों और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के उनके नेता बनकर राजनीति में प्रवेश और हिंसा पैसा तथा तिकड़म के बल पर सत्ता हथिया कर सरकारी धन की लूट और भ्रष्टाचार का चित्रण किया है। 'झूठा सच' में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के दशक में देश के निर्माण में बुद्धिजीवियों और नेताओं की प्रगतिशील और प्रतिगामी दोनों प्रकार की भूमिकाओं का चित्रण किया है। गिरिराज किशोर ने लोग 1966 में इतिहास के उस काल कालखंड का चित्रण किया है। जब औपनिवेशिक शासन भारत में अंतिम घड़ियां गिन रहा था और उसके साथ ही जमींदार वर्ग भी अपने वर्गीय अधिकारों से वंचित होने की आशंका से ग्रस्त अनिश्चय और आशंका की मानसिकता में जी रहा था। यह वर्ग के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के बाद अंग्रेजों की सोची समझी नीति के तहत पैदा किया गया था जो अंत तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रति वफादार और आजादी की लड़ाई का विरोधी बना रहा। यहां मन्नू भंडारी के उपन्यास 'महाभोज' में दा साहब के रूप में और शैलेश मटियानी ने 'सर्पगंधा' कल्याण ठाकुर के रूप में जिन नेताओं का चित्र प्रस्तुत किया है उसे लेना भी लाजमी है। महाभोज में राजनीति में प्रविष्ट मूल्यहीनता, शैतानियत और नेथ्तक सड़ांध का अत्यंत यथार्थ और सजीव चित्रण मिलता है। आठवें दशक में सत्ता और हस्तांतरण तो एक राजनीतिक दल से दूसरे राजनीतिक दल में जरूर हुआ, पर मूल्य भ्रष्टता और सड़ांध में कोई फर्क नहीं पड़ा। इसका कारण यह था कि जिन राजनीतिक दलों के बीच सत्ता का हेरफेर हुआ वे सभी भ्रष्ट मूल्यों की शिकार थे। कांग्रेस के शासन में, समाजवादी शासन की स्थापना के दिखावे के बावजूद पूंजीवादी और सामंतवादी व्यवस्था ही राजनीति पर हावी रही। राजनीति में धन गुंडागर्दी और छल प्रपंच का बोलबाला हो गया जिसकी आपूर्ति पूंजीवादी सामंतवादी शक्तियां खूब करती रही। समकालीन राजनीति के इस घिनौने चेहरे को बेनकाब करने में मन्नू भंडारी को 'महाभोज' में अदभुत सफलता मिली।

मृदुला गर्ग के अनित्य में 1930 के दशक से 1960 के दशक की अवधि में भारतीय राजनीति की प्रमुख धाराओं का विश्लेषण करते हुए साम्यवादी और सशस्त्र क्रांतिकारी धारा को अपनी सहानुभूति दी और यह विचार प्रस्तुत किया कि इस क्रांति की असफलता ही भारत के पिछड़ेपन और आर्थिक वैषम्य का कारण है। कामतानाथ कालकथा में दशक 1918 से 1929 की कार्यावधि में उत्तर भारत के सामाजिक मसलों को स्वाधीनता आंदोलन से जोड़कर प्रस्तुत करते हैं। संजीव के उपन्यास 'जंगल जहां शुरू होता है' में नेपाल की सीमा से लगे बिहार के पश्चिमी चंपारण जिले के जंगलों में निवास करने वाली जनजाति तथा क्षेत्र के डाकू और राजनीतिज्ञों, पुलिस और प्रशासन के बीच छिड़ी जंग का चित्र प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में स्पष्ट रूप से दिखा गया है कि वास्तविकता डाकू से बड़े डाकू तथाकथित राजनेता हैं। जो सत्ता प्राप्त करने के लिए इनका उपयोग करते हैं देश में राजनीति के अपराधीकरण और साथ ही अपराध के राजनीतिकरण की बढ़ती प्रवृत्ति को भी कथाकार ने एक अनुभव के रूप में प्रस्तुत किया है। काशीनाथ सिंह के उपन्यास 'अपना मोर्चा' रिपोर्ताज शैली में लिखा गया एक लघु उपन्यास है जिसमें पहली बार समकालीन राजनीति के महत्वपूर्ण पक्ष छात्र आंदोलन को भुक्तभोगी निष्ठा के साथ प्रस्तुत किया गया है। 'तमस' में देश विभाजन से पूर्व हुए सांप्रदायिक दंगों तथा उन्हें प्रेरित करने वाले कारणों को दिखाया गया है। यद्यपि तमस के घटनाक्रम का घटना केंद्र का नाम नहीं दिया गया है। किंतु उसमें विभाजन पूर्व रावलपिंडी में हुए और शहर तथा गांव दोनों में

लगातार पांच दिन चलने वाले भीषण सांप्रदायिक दंगों का वर्णन है तमस का अर्थ 'अंधकार' होता है। उपन्यास में अनेक पात्रों एवं छोटे–छोटे कथा प्रसंगों के माध्यम से पूरे देश के महत्वकांक्षी, हिंदू मुस्लिम नेताओं, विभिन्न राजनीतिक दलों एवं अंग्रेजी, प्रशासनिक अधिकारियों की कुटिल नीति का चित्रण मिलता है।

गिरिराज किशोर का उपन्यास 'पहला गिरमिटिया' दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के शिकार भारतीय डायस्पोरा के आत्म सम्मान के लिए गांधी के 21 सालों के संघर्ष की कथा है। राजनीति जैसे महत्वपूर्ण सत्ता के क्षेत्र में पांव रखने पर एक स्त्री को घर बाहर कि जिन कठोर और विपरीत परिस्थितियों के विरूद्ध संघर्ष करना पड़ता है। उसका बेहद रोचक और विश्वसनीय चित्रण मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'चाक' में हुआ है। परंपरागत पुरूष वर्चस्व के विपरीत स्त्री का राजनीति में सक्रिय हस्तक्षेप, समाज और राष्ट्र के लिए ज्यादा लाभदायक और रचनात्मक होगा पुरूषों की राजनीति में जहां ठेठ अवसरवाद, हिंसा, लूट–खसोट की प्रबलता रहती है। वहीं पर स्त्री राजनीति को ज्यादा संवेदनशील मानवीय और रचनात्मक बना सकती है। इस तरह लेखिका ने स्त्री के साथ पुरूष का समाहार करवाकर समाज के सामने नए मूल्य प्रस्तुत किये हैं। अमरकांत बीसवीं शताब्दी और इक्कीसवीं शताब्दी के यथार्थवादी उपन्यासकार माने जाते हैं। उनके उपन्यासों में जहां एक तरफ भारतीय सामाजिक और राजनीतिक संघर्ष को नये ढ़ंग से चित्रित किया गया है। वहीं दूसरी तरफ युवा क्रांति एवं प्रेम को नए स्वरूप संवेदना के साथ प्रस्तुत करने का सफल प्रयास भी किया गया है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आजादी के बाद के उपन्यासों में स्वाधीनता संग्राम के सक्रिय रूप ग्रहण करने से लेकर बीसवीं सदी के अंत तक का व्यापक राष्ट्रवादी स्वर इन उपन्यासों में देखने को मिलता है। गांधीवाद का प्रभाव, राजनीति की उथल–पुथल, विभाजन का दंश, वोट बैंक की राजनीति इन सभी का बोलबाला हिंदी उपन्यासों में देखने को मिलता है। प्रत्येक उपन्यासकार अलग विषय को अपनी नवीन शैली में प्रस्तुत कर साहित्य में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने में कामयाब हो रहा है। समकालीन परिस्थितियों पर यदि नजर डाली जाए तो हिंदी उपन्यासों में राष्ट्रवादी स्वर की और भी जरूरत महसूस की जा रही है, इस पर दो मत नहीं हो सकते।

संदर्भ

1. राष्ट्रीयता : बाबू गुलाबराय, पृष्ठ संख्या 3, किताबघर प्रकाशन
2. डॉ. नगेंद्र, विचार और विवेचन, पृष्ठ संख्या 92
3. हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास–डॉ. राम प्रसाद मिश्र पृष्ठ सं0 29
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास– राम चन्द्र शुक्ल पृष्ठ सं0 59

Copyright © 2014, Dr. R.P.Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.